चतुर्थ अध्याय

'दीक्षांत' और 'अग्निपंखी' उपन्यासों में चित्रित समस्याएँ

'दीक्षांत' और 'अग्निपंखी' उपन्यासों में चित्रित समस्याएँ

4 1 *शैक्षिक समस्याएँ* -

4 1 1 अध्यापक जीवन की दयनीयता,

4 1 2 सम्मानहीन-शिक्षक पेशा,

4 1 3 अध्यापक वर्ग की आपसी जलन,

4 1.4 गलत शिक्षाप्रणाली,

4 1 5 नौकरी-अस्थिरता,

4 1.6 परीक्षा पद्धति का अवमूल्यन,

4 1 7 विद्यार्थियों की उद्दंडता।

4 2 *पारिवारिक समस्याएँ* -

4 2 1 संयुक्त परिवार का विघटन,

4 2 2 बँटवारा और भाईजनों का संघर्ष,

4.2 3 सास-बहू का संघर्ष,

4 2 4 पीढीगत मान्यताओं की टकराहट,

4 2 5 रिश्ता निभाने की समस्या।

4 3 *सामाजिक समस्याएँ* -

4 3 1 अर्थाभाव की समस्या,

4 3 2 बुढापे की समस्या,

4 3 3 झूठी प्रतिष्ठा का लबादा,

4 3 4 अंधविश्वास की समस्या,

4 3 5 वैद्यों की मक्कारी,

4 3.6 नगरोन्मुखता के दुष्परिणाम -

(1) आवास की समस्या,

(2) मानवीयता का ऱ्हास।

निष्कर्ष

'दीक्षांत' और 'अग्निपंखी' उपन्यासों में चित्रित समस्याएँ

आधुनिक युग में उपन्यास का उद्देश्य केवल मनोनंजन करना मात्र नहीं रह गया है। मानव जीवन के विविध क्षेत्रों से संबंधित भिन्न-भिन्न प्रकार की समस्याएँ आज जिस रूप में उपन्यास में उठाई जाती हैं, उससे यह स्पष्ट होता है कि समाज-जीवन के अंकन की दृष्टि से उपन्यास सबसे अधिक समर्थ साहित्यिक विधा है।

"किसी उपन्यास में उठायी गई समस्याएँ और उनके प्रति लेखक का दृष्टिकोण जितने गहन स्तर पर सत्य का स्पर्श करेगे उस कृति की सफलता की संभावनाएँ भी उतनी ही अधिक होंगी।"[1]

कभी-कभी ऐसी समकालीन समस्याओं का भी चित्रण उपन्यास में किया जाता है, जो सर्वथा अस्थायी होती है। मानव जीवन के विविध परिवेशों की प्राय सभी संभाव्य समस्याएँ उपन्यास में उठायी जाती हैं और उन पर चिंतन किया जाता है।

सूर्यबाला ने 'दीक्षांत' और 'अग्निपंखी' उपन्यास में समस्याओं का सूक्ष्म चित्रण किया है। 'दीक्षांत' उपन्यास की कथा शहरी जीवन पर आधारित है। अध्यापक जीवन की समस्याओं को इसमें सूक्ष्म रीति से चित्रित किया है। 'अग्निपंखी' उपन्यास में संयुक्त परिवार की समस्याओं को चित्रित किया है। इस तरह लेखिका ने आलोच्य उपन्यासों में शैक्षिक एवं पारिवारिक समस्याओं को अंकित किया है। जिनका परिचय निम्न प्रकार दिया जा रहा है -

4 1 शैक्षिक समस्याएँ -

4.1.1 अध्यापक जीवन की दयनीयता -

वर्तमान युग में अध्यापक का जीवन दयनीय बन गया है। गुंडागर्दी और भ्रष्टाचार के इस माहौल में अध्यापकों को नौकरी को सँभालकर रखने के लिए अनेक तिकडमें करनी पडती हैं। क्लास में छात्र शोर-शराबा करते हैं, अध्यापक को बेइज्जत करते हैं। यह होने के बावजूद भी अध्यापक को प्रिसिपल के सामने दयनीय बनना पडता है। आजकल क्लासरूम में चिल्ला-चिल्लाकर जी जान से पढाना या समझाना कुछ मायने

नहीं रखता। आज पढने-पढाने का महत्त्व अब सिर्फ इतना रह गया है कि अध्यापकों के गुजारे के लिए एक नौकरी और छात्रों को एक शगल की प्राप्ति।

'दीक्षांत' उपन्यास में मि शर्मा की स्थिति भी दयनीय बन गई है। अध्यापक की आर्थिक कमजोरी को पहचान कर अभिभावक ऐसे अकड जाते हैं मानो ट्यूशन की आवश्यकता अपने बच्चे के लिए नहीं, अध्यापक के लिए ही है। आदर्श उसूलवाले मि शर्मा को आज परमानेंट नौकरी नहीं मिल रही है। इसलिए उसे ट्यूशन लेने पडते हैं। मि शर्मा ठक्कर के घर ट्यूशन लेते हैं तब उन्हें घंटो तक बच्चों का इंतजार करना पडता है। जैसे - ''जरा इंतजार कर ले मास्टरजी, बच्चे हैं न, उनके मामाजी आए हुए हैं, नया-नया ड्राइव करना सीखा है। सो नई गाड़ी लेकर यही 'किडी कार्नर' गया होगा आइस्क्रीम वगैरह खाने, अभी आ जायेगा।''[2]

बच्चों को पढाने के बाद मि. शर्मा को ठक्कर की पत्नी का कुछ न कुछ काम करना पडता है। जब वे काम करने से इन्कार करते हैं तब दूसरे दिन उन्हें 'बच्चा खेल रहा है' या 'दूध पी रहा है' जैसे बहाने बताकर बिठाया जाता है।

मि शर्मा को किसी जगह नौकरी मिलती भी है तो अस्थाई रूप में। अमीर छात्र कॉलेजों में पढाई के नाम पर शरारतें करते हैं। छात्र अध्यापक के साथ उद्दंडता से पेश आते हैं। मि शर्मा को भी बरूआ जैसा उद्दंड छात्र तकलीफ पहुँचाता है। मि शर्मा क्वालिफाईड अध्यापक है। कम योग्यतावाले मि गुप्ता को बडी योग्यतावाले मि. शर्मा से जलन पैदा होती है। वे छात्रों का साथ देकर मि शर्मा के प्रति गलत प्रचार करते हैं और नाहक बदनामी करते हैं। मि गुप्ता ऊपर से झूठी सहानुभूति भी मि शर्मा के साथ जताते हैं।

मि शर्मा जैसे ईमानदार अध्यापकों को संस्था में स्थान नहीं होता है। प्रिंसिपल असली-नकली के अंतर को जानता है पर वह भी ईमानदार अध्यापक का साथ नहीं दे सकता है। सीनियर लेक्चर्स उन्हें मिलने के बजाय अंत में रेजीग्नेशन ही देना पड़ता है। इस पर प्रिंसिपल भी कहते हैं कि, ''मैनेजिंग कमेटी के मेंबर्स भी सिर्फ उन मसलों पर हस्तक्षेप करते हैं जो सीधे-सीधे उनके नफे-नुकसान से जुडे हो आदर्शवादी उसूलवाले लोगों से हर डिपार्टमेंट, हर संस्थान पिंड छुडाने की कोशिश करता रहता है।''[3]

आज समाज में योग्यतावाले आदमी को नौकरी में स्थिरता नहीं मिलती है। उन्हें लाचार

जीवन जीना पडता है। कॉलेज की 'सिचुऐशंस' भी नहीं चाहती की आदर्श, योग्यतावाले अध्यापक हो। इसी कारण 'दीक्षांत' में मि शर्मा का जीवन दयनीय बन गया है।

4.1.2 सम्मानहीन-शिक्षक पेशा -

वर्तमान युग में 'गुरू देवो भव' की परंपरा नष्ट होकर आज गुरू एक सम्मानहीन प्राणी बन गया है। आज उसे जितनी पूज्यता विद्यार्थी तथा समाज द्वारा मिलनी चाहिए, उतनी नहीं मिल रही है। एक जमाना था, अध्यापक का वाक्य प्रमाण माना जाता था। आज उसी के प्रति कई आशंकाएँ प्रकट की जाती है। गुरूकुल में शिक्षा पानेवाले विद्यार्थी मृत्यु तक अपने अध्यापकों का सम्मान करते थे। गुरू की आज्ञा का पालन करते थे। आज आज्ञापालन के स्थान पर विद्यार्थी हर शिक्षकों में ही खोट ढूँढने के प्रयास करते हैं। विद्यार्थियो के मन में अध्यापकों के प्रति सम्मान की भावना का दिनों-दिन ऱ्हास होता हुआ दिखाई दे रहा है। आदर्श नागरिक के रूप में शिक्षक की ओर देखने का समाज का दृष्टिकोण भी परिवर्तित हुआ है। आज विद्यार्थी बडे हो जाने के बाद अध्यापकों का एहसान भूल जाते हैं। उनके सामने ही उद्दंडता से पेश आते हैं। आज छात्रों के मन में अध्यापकों के बारे में घृणा, नफरत पैदा होने लगी है। अध्यापक कुछ कहते तो छात्र उनके ही सामने लेक्चर छोडकर चले जाते हैं। आज शिक्षक-पेशा सम्मानहीन, आदरहीन बन गया है।

4.1.3 अध्यापक वर्ग की आपसी जलन -

एक शिक्षासंस्था में कई अध्यापक एक साथ काम करते हैं। उस वक्त उनके बीच सुप्त रूप में आपसी संघर्ष पनपता है। अध्यापक कक्ष में से कुछ हमदर्द बनते हैं, कुछ जलते रहते हैं। इस प्रकार की अनबनी कई कारणों से बनती है। एकाध अध्यापक की शैक्षिक योग्यता अधिक होती है। कम योग्यतावाले संकुचित मनोवृत्ति के अध्यापक को बडी योग्यतावाले अध्यापक से जलन पैदा होती है। कभी-कभी अधिक कार्यशीलता भी किन्हीं लोगों को अच्छी नहीं लगती है। इसलिए कामचोर अध्यापक कार्यक्षम एवं ईमानदार अध्यापकों के प्रति नफरत व्यक्त करते हैं, विद्यार्थियों में उनका गलत प्रचार करते हैं, उनकी नाहक बदनामी की जाती है और उनके विरोधी वातावरण तैयार किया जाता है। कभी-कभी तो ऐसे अध्यापक के खिलाफ छात्रों को भडकाया जाता है तब ऐसे ईमानदार अध्यापक मुश्किल में पडते हैं। कारण कभी-कभी कुछ अध्यापक ऐसा मुखौटा धारण

करते हैं कि विद्यार्थी और अध्यापक के संघर्ष में साथ देते हैं विद्यार्थियों का और झूठी सहानुभूति जताते हैं अध्यापक से। सिनियर अध्यापक ज्युनियर को हीन समझते हैं और अपने को श्रेष्ठ साबित करने की चेष्टा करते हैं।

'दीक्षांत' के शर्माजी योग्यतावाले अध्यापक हैं। गुप्ताजी एम् ए थर्डक्लास है। शर्माजी का क्वालिफिकेशन गुप्ताजी का बोझ बनता है। अन्य कोई कारण न होते हुए भी नाहक ही वे शर्माजी का द्वेष करते हैं -

''आप पीएच्.डी. ठहरे, ठीक है, मेरी तरफ से कोई आपत्ति नहीं, आप जो चाहे वे लेसन लीजिए।''[4]

मि शर्मा बरूआ जैसे उद्दंड लडके को परीक्षा में नकल करते समय पकडते हैं और परीक्षा में वह फेल हो जाता है। बरूआ मि शर्मा के साथ उद्दंडता से पेश आकर उन्हें धमकाता है तो मि गुप्ता झूठी सहानुभूति मि शर्मा के साथ जताते हैं -

''मैंने उन लडकों को खूब फटकारा है और यह भी कहा कि आईंदा से शर्माजी के घंटे में कोई शरारत की तो मुझसे बुरा कोई न होगा . आज कैसा रहा क्लास, सब ठीक-ठाक बैठे थे न ।''[5]

इस प्रकार यह सिद्ध है कि मनुष्य जब एक दूसरे के साथ दीर्घकाल तक एक जैसा ही काम करता रहता है तब किसी न किसी कारणवश परस्पर में अनबन बनी रहती है। कभी इसके लिए मनुष्य का स्वभाव कारण बनता है- कभी कार्य तो कभी तत्कालीन परिस्थितियाँ। अध्यापक वर्ग को सुशिक्षित वर्ग के रूप में देखा जाता है। फिर भी मनुष्यमात्र की प्रवृत्तियों से वह अलग नहीं है। अत. अध्यापकों में परस्पर के प्रति स्नेह-द्वेष की भावनाएँ दिखाई पडती हैं। और कभी-कभी तो परस्पर में होनेवाला यह द्वेष एकाध अध्यापक का जीना भी दूभर कर देता है।

4.1.4 गलत शिक्षाप्रणाली -

भ्रष्टाचार के चंगुल से शिक्षा जैसा पवित्र क्षेत्र भी नहीं छूट सका है। राजनीति का प्रभाव इस क्षेत्र पर पडने के कारण अनेक शिक्षा संस्थान उनकी जघन्य गुटबाजी और गिरोहबाजी के अड्डे बन गए हैं।

बडे-बडे अमीरों के हाथों में शिक्षा संस्थाएँ फँस गई हैं। इन अमीरों के लिए शिक्षा का कोई मूल्य नहीं होता है। अपनी हैसियत को ऊँचा उठाने के लिए वे शिक्षा संस्था का इस्तेमाल करते हैं। उसके जरिए वे राजनीति में अपनी जगह बना लेते हैं। कुछ अध्यापकों के जरिए वे अपना प्रचार करते हैं। ये अध्यापक भी अपने असली कार्य से पीठ फेरकर संचालकों के लिए कार्य करते रहते हैं। विद्यार्थी कल्याण उनके लिए कोई मायने नहीं रखता है।

संचालकों के बच्चे कॉलेजों में पढाई के नाम पर शरारते करते रहते हैं। इसके बावजूद भी उन्हें उत्तीर्ण कराने में संचालकों के चमचे अध्यापक मदद करते हैं। परीक्षा में नकल कराने की सुविधा उपलब्ध करा देते हैं। अनिष्ट मार्ग से अध्यापकों की विद्यार्थियों को होनेवाली यह मदद शिक्षा का अवमूल्यन करती है। अन्य विद्यार्थियों पर अन्याय करती है। इस बात को जानकर कुछ अध्यापक इसके खिलाफ लडते हैं। लेकिन ऐसे ईमानदार अध्यापकों को ऐसी संस्था में स्थान नहीं होता है। उन्हें निकाला जाता है। प्रिंसिपल असली-नकली के अतर को जानता है। पर वह भी ईमानदार अध्यापक का साथ नहीं दे सकता है। कारण संचालकों के खिलाफ होने पर उसकी नौकरी धोखे में आती है। इसलिए सत्य से अन्याय कर उसे असत्य का साथ देना पडता है।

'दीक्षांत' उपन्यास के अधिव्याख्याता मि गुप्ता बरूआ जैसे उद्दंड लडकों का साथ देता है। उसे परीक्षा में पास कराने का आश्वासन देता है। लेकिन अधिव्याख्याता मि. शर्मा इस गलत नीति का विरोध करते हैं और धोखा खाते हैं। कारण प्रिंसिपल मि. राजदान भी संस्था का एक खिलौना बन गया है। वह अपने पद को बनाए रखना चाहता है। उसके हाथ में कोई अधिकार नहीं है। इसी कारण मि शर्मा को कॉलेज से निकालते समय वह कुछ नहीं कर सकता है। अपनी नौकरी के चले जाने के डर से वह विरोध भी नहीं कर सकता है। प्रिंसिपल अपनी पत्नी से मि शर्मा के बारे में सबकुछ बताता है। तब उनकी पत्नी तो इसका विरोध करने की बात कहती है। उस समय प्रिंसिपल कहता है, ''लेकिन इस विरोध का परिणाम कुल मिलाकर यही होता कि शर्मा को तो निकालने से भला मैं क्या रोक पाता, उल्टे अपने कैरियर के लिए हमेशा का एक खटका जरूर पाल लेता, ब्लैक लिस्टेड हो जाता और एक बार मैनजमेंट की ऑख की किरकिरी बनने के बाद अपनी गद्दि संभालना बेहद जहालत भरा काम हो जाता है।''[6]

प्रिंसिपल के अपने अधिकार होने पर भी वह आज संस्था के सामने कुछ नहीं कर सकता है। इस प्रकार की विचित्र स्थिति के कारण आज शिक्षा क्षेत्र भी भ्रष्ट हो चुका है।

4.1.5 नौकरी की अस्थिरता -

आज शिक्षा क्षेत्र में पढे-लिखे उच्चशिक्षित लोगों को भी नौकरियॉ प्राप्त होना मुश्किल बन गया है। लोग कडी मेहनत और अनेक प्रकार के छोटे-छोटे काम करके शिक्षा प्राप्त करते हैं किंतु नौकरी के लिए हाथ में डिग्रियॉ लेकर दर-दर भटकना पडता है। आज उच्चविद्याविभूषित होकर भी नौकरी नहीं मिलती है। नौकरी न मिलने के कारण उनका गुणात्मक ऱ्हास होता है। कभी उनके प्रति अभद्र व्यवहार होता या कोई बेइज्जती हो तो उसके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की जाती है। ऊपर से उन्हें ही जिम्मेदार ठहराया जाता है।

'दीक्षांत' उपन्यास में मि शर्मा की नौकरी अस्थिर दिखाई देती है। उच्चविद्या विभूषित होने के बाद भी उन्हें हर जगह नौकरी में निराशा ही मिलती है। जिस जगह जाते हैं परमानेंट नौकरी नहीं मिलती। ऊँची हैसियत होने के बावजूद भी छोटे पद पर काम करना पडता है। तब बडी-बडी डिग्रियॉ एक बोझ बन जाती हैं। हर जगह साक्षात्कार में, ''आप हमारे लिए ओवर क्वालिफाइड है - हमें ओवर क्वालिफिकेशन नहीं चाहिए .. या 'फिर आप टिकेंगे नहीं, किसी सीनियर कालेज में जगह मिलते ही चले जायेंगे . ..' सीनियर कालेज में जाओ तो देखिये, आपका अनुभव नहीं है . .हम अनएक्सपीरिएंस्ड ले ही नहीं सकते.. ।''[7] मि शर्मा एम्. ए. पीएच् डी है। आज उसे परमानेंट नौकरी नहीं मिल रही है। किसी जगह नौकरी मिलती भी है तो टेंपरी। सीनियर लेक्चर्स उन्हें मिलने के बजाय त्यागपत्र देने के लिए मजबूर किया जाता है।

'अग्निपंखी' में भी जयशंकर पढाई पूरी करने के बाद कहीं जगह दरखास्त भेजता है। किंतु उसे नौकरी नहीं मिलती है। इसी कारण लोग उसकी हॅसी उडाते हैं। तब वह कहता है, ''(नौकरी) मिल क्यों नहीं रही ? पर मैं चाहता हूँ मनलायक मिले, तब इकठ्ठे जाऊँ। यह क्या कि हर चार दिन पर एक छोड दूसरी करूँ जब तक मन की, कायदे की नहीं मिलेगी, नहीं जाऊँगा।'' तो वह घर के बाहर भी निकलना छोड देता है। शहर में एक जगह नौकरी मिल जाती है पर वह भी अस्थायी है। छुट्टी लेने पर सुपरवाइजर भी उसे कहता है कि, ''छॅटनी के वक्त नाम ऊपर आ गया तो रोना गिडगिडाना मत के ?''[8]

आज उच्चशिक्षा होने के बावजूद भी नौकरी में अस्थिरता दिखाई देती है। लगता है शिक्षा का मूल्य भी ढह चुका है। बडी-बडी उपाधियॉ भी बेकाम सिद्ध हो रही हैं। शिक्षित लोगों में बेकारी फैलने के ही ये लक्षण हैं।

4.1.6 परीक्षा पद्धति का अवमूल्यन -

वर्तमान युग में छात्रों की गुंडागर्दी सर्वत्र बढती जा रही है। इसके लिए केवल छात्र ही दोषी नहीं है। उनके लिए उसी प्रकार का माहौल बनानेवाले माता-पिता, अध्यापक तथा समाज आदि सभी जिम्मेदार हैं। शिक्षा जैसे पवित्र क्षेत्र में भी भ्रष्टाचार ने अपना साम्राज्य फैला रखा है। परीक्षा में अध्ययन किए बिना ही नबर बढाए जाते हैं। फलस्वरूप गुणी, अध्ययनशील छात्रों की हानि होती है। उच्चवर्ग के लोग अपने बच्चों को ट्यूशन लगाते हैं। परंतु उनके बच्चे ट्यूशन में भी पढाई नही करते हैं और कक्षा में भी नहीं पढते हैं।

परीक्षा की पवित्रता नष्ट होने के कारण अध्ययन-विद्यार्थी अपना आत्मविश्वास खो रहे हैं। कारण सालभर शरारतें करनेवाले विद्यार्थी परीक्षा में अध्यापकों की मदद से ही नकल करते हैं और अच्छे अंको से उत्तीर्ण होते हैं और सालभर पढाई की मेहनत करनेवाले विद्यार्थी उनके पीछे ही रहते हैं। इससे मेहनत व्यर्थ सिद्ध होती है। ऐसे विद्यार्थी परीक्षा पद्धति पर अपनी खीझ व्यक्त करते हैं। महाविद्यालय में अध्यापन कार्य करनेवाले अधिव्याख्याता निजी ट्यूशन भी लेते हैं। कक्षा के विद्यार्थियों में से जो विद्यार्थी निजी ट्यूशन ग्रहण करते हैं उनके प्रति अध्यापक पक्षपात करते हैं। उन्हें ज्यादा अंक प्रदान करते हैं और अन्य विद्यार्थियों की तरफ देखने का उनका दृष्टिकोन सहानुभूतिहीन होता है।

'दीक्षांत' उपन्यास में मि. शर्मा का लडका विनय परीक्षा के प्रति अपनी खीज व्यक्त करते हुए कहता है, "पढाई करने, न करने का कोई फायदा ही नहीं, जो-जो लडके सर से ट्यूशन लेते हैं, उन्हें बिना पढे भी अच्छे नंबर मिल जाते हैं. और फर्स्ट तो उनसे ट्यूशन लेनेवाले ही आएंगे।"[9]

बरूआ जैसे लडके भी परीक्षा मे नकल करते हैं और नकल करते समय पकडे जाने पर पास करने के लिए अपने ही अध्यापक मि शर्मा को धमकी देते हैं। आज परीक्षा में नकल करना एक फैशन बन गया है।

4.1.7 विद्यार्थियों की उद्दंडता -

विद्यार्थियों की उद्दंडता और शरारतभरा व्यवहार वर्तमान जीवन की भारी समस्या है। विद्यार्थी अध्यापकों के साथ उद्दंडता से पेश आते हैं। प्राचीन काल में विद्यार्थी 'गुरू देवो भव' के अनुसार गुरू

से पूज्यता का भाव रखते थे। उनका आदर करते थे। अध्यापकों के साथ जबान नहीं लडाते थे। आज के विद्यार्थी परंपरागत आदर्शों को भूलकर अध्यापकों के कंधे से कंधा मिलाकर उद्दंडता का परिचय देते हैं।

समाज में स्थित उच्चवर्ग अपनी स्वार्थ-नीति से दिन-रात धन कमाने की फिक्र में रहता है। क्लब, शराब, पार्टियॉ, सोशल वर्क आदि में व्यस्त माता-पिता अपने बच्चों को सभी सुविधाएँ जरूर देते हैं किंतु अपनत्व और प्यार नहीं दे सकते हैं। यही दूरियॉ बच्चों के मन में विद्रोह, उद्दंडता की भावना पैदा करती है। उच्चवर्ग के छात्र नैतिक आदर्शों से विहीन, स्नेह से वंचित रहकर सुविधाओं के माहौल में पल रहे हैं, जो गुंडागर्दी, आवारागिरी, सैर-सपाटे, कार लिफ्टिंग आदि में अग्रेसर हैं। उनके लिए पढना-लिखना 'आवश्यकता' नहीं, एक 'फैशन' बन गया है। भ्रष्टाचार से प्राप्त पैसा पानी की तरह बहाया जाता है। एक-दूसरे के साथ इशारे-बाजियाँ करते हैं। लेक्चर के समय जूतों की आवाज करना, अध्यापकों द्वारा टोकने पर लेक्चर छोड बाहर चले जाना आदि प्रकार की उद्दंडता करते हैं। छात्र जब देर से क्लास में आते हैं तो उनका मकसद यही होता है कि सर को खिझाना और फिजूल बोलकर ज्यादा से ज्यादा समय नष्ट करना। कॉलेज आते समय तेज कार चलाना, शोर-शराबा, हुडदंगबाजी करना आदि अनिष्ट प्रवृत्तियाँ आज के छात्रों में दिखाई देती हैं। परीक्षा के समय में भी अपनी कापी को शोर-शायरी लिखकर भर देना और ऊपर से अध्यापक को पास करने की धमकी देना यही छात्रों की वृत्ति दिखाई देती है।

उक्त सारी स्थिति को सूर्यबाला ने 'दीक्षांत' उपन्यास में बरूआ नामक विद्यार्थी के माध्यम से चित्रित किया है। बरूआ एक उद्दंड छात्र है। शोर-शराबा करना, डेस्क खडखडाना, लडकियों को इशारे करना, अपने साथियों सहित देरी से क्लासरूम में पहुँचना आदि शरारतें वह करता है। इस पर उन्हें पूछने पर पूरी उद्दंडता से कहते हैं कि, ''सर, हम क्या करें, मॅडम प्रैक्टिकल पूरे हुए बगैर आने ही नहीं देती।''[10]

बरूआ उद्दंडता से मि. शर्मा को परीक्षा में पास करने को कहता है - ''मैं तो इसलिए आया था आपके पास की कालेज में आपको भी रहना है, मुझे भी रहना है, शायद यह समझकर आप थोडी रियायत बरत दें, आप नहीं चाहते तो न सही . .।''[11]

इस तरह के बरूआ प्रत्येक महाविद्यालय में होते हैं किंतु ऐसे कुछ बरूआ महाविद्यालय के सारे शिक्षा-माहौल को बिगाड देते हैं। न वे स्वयं सिखना चाहते हैं न दूसरे विद्यार्थियों को सिखने देते हैं।

4 2 पारिवारिक समस्याएँ -

4.2.1 संयुक्त परिवार का विघटन -

परिवारों के सामूहिक संगठन का नाम समाज है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। वह समाज में जन्म लेता है, वहीं फलता-फूलता है। संयुक्त-परिवार प्रथा भारतीय समाज की अपनी अलग पहचान है। यह प्रथ हमारे यहॉ प्राचीन काल से चली आ रही है। लेकिन आधुनिक काल में शिक्षा, विज्ञान का प्रसार, नवीन दृष्टिकोन आदि के कारण संयुक्त परिवार की प्रथा का द्रुत गति से विघटन हुआ है।

''आधुनिक युग में संयुक्त परिवार विघटीत हो रहे हैं, क्योंकि पाश्चात्य शिक्षा, औद्योगीकरण और नगरीकरण के फलस्वरूप भारत वर्ष की सामाजिक परिस्थितियों में क्रांतिकारी परिवर्तन हो गया है। व्यक्तिवाद भी संयुक्त परिवार को विघटीत करने में सहायक हो रहा है। स्त्रियों का कलह भी इसका एक कारण है। संयुक्त परिवार में अनेक लोगों का झुंड होने के कारण पति-पत्नि और विशेषकर नवविवाहित दंपत्तियों का स्वतंत्र रूप से मिलना-जुलना संभव नहीं हो पाता, जो मनोवैज्ञानिक दृष्टि से हानिकारक है।''[12]

संयुक्त परिवार में वैयक्तिक आशा-आकांक्षाओं का गला घोट दिया जाता है और व्यक्ति घुटन भरी जिदगी जीने लगता है। संयुक्त परिवार में देवरानी और जेठानी के बीच झगडे भी होते हैं और इससे पारिवारिक जीवन अशांत बन जाता है। व्यक्ति के बेहत्तर विकास के लिए संयुक्त परिवार कभी उपयुक्त था पर आज नहीं है।

सूर्यबाला ने 'अग्निपंखी' उपन्यास में संयुक्त परिवार का चित्रण किया है। जयशंकर संयक्त परिवार का सदस्य है। उसके पिता की मृत्यु के बाद चाचा, ताऊ उसे पढाते हैं। अब वह शहर में नौकरी करता है। संयुक्त परिवार के वातावरण में जयशंकर का दम घूटने लगता है। वह सिर्फ अपनी पत्नी को लेकर शहर में रहना चाहता है। परंतु उसकी मॉ अपने बेटे-बहू के साथ रहना चाहती है। मॉ परिवार का पूरा काम-काज सँभालती है, अपने बेटे के लिए अपनी जेठानी, छोटी सभी के ताने सुनती है। जब वह अपने शहर के बेटे से गाँव लौटती है तब परिवार में झगडे शुरू होते हैं। उस समय छोटको कहती है -

''येल्लो, दो आँख तो नहीं करती, पर पक्की कोठरी उठती देखते ही कलेजे में जलन होने लगी। जयशंकर पढे-लिखे सहरवाले हुए। गांव में कहा टिकेंगे। फिर उन्हें जैसा बनवाना हो, आये, देखे, बनवाए।''[13]

जयशंकर की मॉ बीमार हो जाने पर परिवार के लोगों को उसकी सेवा करनी पडेगी, इसलिए वे उसे सॅभालना नहीं चाहते हैं। जब वह ठीक हो जाएगी तभी वे उसे सॅभालने की बार्त करते हैं।

आज समाज में संयुक्त परिवार में रूतबा, रूपए और जमीन-जायदाद के कारण संघर्ष दिखाई देता है। कारण वर्तमान युग का आदमी अधिकाधिक आत्मकेंद्रित बन गया है। परिवार के लोग सिर्फ अपने बच्चों के बारे में सोचते हैं, अपने भाई के बच्चों के बारे में भी सोचना नहीं चाहते हैं। ऐसा भी दिखाई देता है कि नौकरी करनेवाला अपने घर रूपए भेजना नहीं चाहता उसकी धारणा रहती है कि घर तथा जमीन जायदाद से परिवार के लोग लाभ उठाते हैं। संयुक्त परिवार में यही संघर्ष दिखाई देता है।

4.2.2 बॅटवारा और भाईजनों का संघर्ष -

मध्यवर्ग में पैसा ही महत्त्वपूर्ण बन गया है। अब पैसों के पैरों पर दौडनेवाली दुनिया का निर्माण हुआ है और इसमें भावुक रिश्ते टूट रहे हैं। समाज में संयुक्त परिवार में बॅटवारे के कारण झगडे होते हैं। भाई-भाई के बीच होनेवाला प्रेम, सूखकर सिर्फ अपने बच्चे, पत्नी तक सीमित हो गया है। इसी कारण परिवारों में विघटन हो रहा है -

''परिवार विघटन परिवार की एक ऐसी स्थिति है जिसमें सामंजस्यपूर्ण व मधुर संबंध टूट गए हों, सदस्यों के बीच सहयोग कम हुआ हो, सामाजिक नियंत्रण कमजोर हो गया हो, या अनुशासन व एकता में कमी आ गई हो। परिवार में विघटन की स्थिति तब भी होती है जब सदस्यों में, भूमिकाओं में संघर्ष प्रारंभ हो जाए, जैसे पति-पत्नी में, माता-पिता व बच्चों में, सास-बहू में या भाई-भाई में। जब ऐसा प्रतीत होने लगे कि परिवार ''वांछनीय'' रूप में काम नहीं कर रहा है, अर्थात जब सदस्यों की कार्यरत भूमिकाएँ उनसे समाज द्वारा अपेक्षित भूमिकाओं के अनुकूल न हों तब विघटन की स्थिति का अनुमान लगाया जा सकता है।''[14]

संयुक्त परिवारों में प्रेम की जगह को संपत्ति ने लिया है। अपना-पराया भाव जागृत होने लगा है। दो भाइयों का अपनापन सीमित बनने के कारण संघर्ष होने लगा है। नौकरी करनेवाले भाई को पैतृक संपत्ति से वंचित करने का प्रयास किया जाता है। इस तरह समाज में जायदाद, संपत्ति के कारण ही संघर्ष होते हैं। और रिश्ते आत्मकेंद्रित होते हुए दिखाई देते हैं।

''फॅमिली या परिवार की सीमा आज पति-पत्नी और बच्चे ही है, आगे भाई-बहन, भाभी, जीजा, बाबा-दादा इत्यादी रिश्तेदार नहीं आते।''[15]

'अग्निपंखी' उपन्यास में अपना-पराया भाव आ गया है। अपने परिवार के सदस्यों के प्रति पराया-भाव जागृत ही रहा है। एक सदस्य की शादी हो तो उसे नई कोठी और जो घर से दूर शहर में नौकरी करता है उसे कुछ न देने की भावना पैदा होती है, तब परिवार में झगडा होता है। छोटको के वक्तव्य से यह स्पष्ट होता है, ''जिसने जनम से कभी खेती-बारी जानी ही नहीं, सिवा पढाई के, वह अब सहर में भी रूपया हिलौरे और गाँव की जमीन पर भी हकदारी दिखाये, तो बोलो, क्या यह ठीक होगा ... ईमान की बात होगी ?''[16]

जयशंकर की माँ गॉव में बीमार पड जाती है तब उसकी सेवा करनी पडेगी इसी कारण उसे जयशकर के पास शहर भेज देते हैं। और जब ठीक हो जाती है तब घर का सिर्फ काम करने के लिए उसे सॅभाला जाता है। जमीन के हिस्से के कारण जयशंकर और उसके चाचा में संघर्ष होता है।

आज भाई-भाई में बॅटवारे के कारण संघर्ष हो रहा है। जमीन, जायदाद से हिस्सा प्राप्त करने के लिए लोग कोर्ट-कचहरी जा रहे हैं। जिसके पास नौकरी है उसे जमीन, जायदाद में हिस्सा नहीं ऐसी बात हो गई है। इस तरह पैतृक संपत्ति भी भाई-भाई के बीच संघर्ष का कारण बनती है।

4.2.3 सास-बहू का संघर्ष -

वर्तमान युग में संयुक्त परिवार टूट चुके हैं पर पति-पत्नी, उनके बच्चे और पति के माता-पिता आदि सदस्यों से युक्त कई परिवार पाए जाते हैं। सीमित सदस्यों के परिवारों में से कुछ परिवारों में सास-बहू के संबंध सुखद हैं तो कुछ में दु:खद। रहन-सहन के संदर्भ में सास की अपनी कुछ परंपरागत मान्यताऍ होती हैं और बहू की परिवर्तित युगानुरूप अपनी कुछ नई मान्यताऍ होती हैं। फलत दोनों धारणाओं की टकराहट होती है और सास-बहू के बीच संघर्ष पैदा होता है।

'अग्निपंखी' उपन्यास की सास ग्रामीण जीवन में पली है। उसकी सनातनी मान्यताऍ शहर की नारियों को देखकर बौखला उठती है तब वह बहू से कहती है, ''वाह रे तुम्हारे दस। औरत के लाज-धरम से,

सिर-माथा ठोंककर चलने से हँसी उडती है और रंडी पतुरियों की तरह पेट-पीठ उघाडकर चलने से इज्जत बनती है।''[17]

सास की सेवा करने के बजाय उसे खाने के लिए भी बुलाना बोझ समझा जाता है। मॉ अपने बेटे बहू के साथ रहना चाहती है। परंतु बेटा उसे शहर नहीं ले जाता है। एक बार माँ शहर जाती है तब बहू नाराज होती है। बीमार मॉ की सेवा करने के बजाय अपने पति से सास की करतूते बताती रहती है। वह सिर्फ अपना पति और बच्चों के साथ रहना चाहती है।

समाज में अपनी बेटी से अलग व्यवहार और बहू से अलग व्यवहार करनेवाली सासें भी दिखाई देती है। यद्यपि बहू को भी बेटी माननेवाली सासें भी देखने मिलती हैं, तथापि समाज में सास बहू का संघर्ष ही अधिक रूप में दिखाई देता है।

4.2.4 पीढीगत मान्यताओं की टकराहट -

समाज में जिस तरह वर्गभेद दिखाई देता है उसी तरह पीढियों में भी भेद दिखाई देता है। पुरानी पीढी के लोगों की धारणा रहती है कि नई पीढी हमारे विचारों से चले। हम जिन रूढी, परंपरा का पालन करते हैं उनका वें भी पालन करें। परंतु आज नई पीढी अपने विचारों से चलना चाहती है। वह पुराने विचारों के अलावा नए विचारों को अपनाती है। आधुनिक ढंग से रहना पसद करती है।

''नई शिक्षा के प्रभाव के कारण विवाहोपरांत नवयुवक नए-नए सुख के सपने देखने लगते हैं तो सम्मिलित परिवार में नई समस्या उत्पन्न हो जाती है।''[18]

इसी कारण दो पीढियों में मतभेद होते दिखाई देते हैं। विचारों में आनेवाले युगानुरूप परिवर्तन ही पीढीगत मान्यताओं की टकराहट के लिए कारण बनते हैं।

'अग्निपंखी' उपन्यास में दो पीढियों में संघर्ष दिखाई देता है। जयशंकर शहरवासी बनकर रहना चाहता है। तो मॉ उसे अपने पुराने विचारों से चलने के लिए कहती है। माँ-बेटे में पीढीगत मान्यता के कारण संघर्ष दिखाई देता है। मॉ तिरलोकी ठाकुर के साथ रिश्ता निभाना चाहती है। बेटा उन्हें पराया समझता है। उसी प्रकार सास-बहू में भी पीढीगत मान्यता के कारण संघर्ष होता है। सास-बहू को घर के बारे में

सीख-सिखावन देना चाहती है। परंतु बहू मॉ की बात मानने के लिए तैयार नहीं होती है। शहर में घूमते समय बहू को सास की धोती की लज्जा आती है। इसी कारण झगडा हो जाता है। आज समाज में दो पीढियों के विचारों में भिन्नता दिखाई देती है। इसी कारण पीढीगत मान्यताओं की टकराहट हो रही है।

4.2.5 रिश्ता निभाने की समस्या -

मनुष्य समाजशील प्राणी होने के कारण समाज में रहते हुए उसे एक-दूसरे के साथ संबंध रखना पडता है। व्यक्ति-व्यक्ति, परिवार-परिवार, समाज-समाज के बीच अच्छे संबंध होना हितकर है। गॉवों में ऐसे ही संबंध अधिक मात्रा में दिखाई देते हैं। संयुक्त परिवार में यह संबंध अच्छे रहते हैं। परिवार में एक-दूसरे के प्रति आत्मीयता, अपनापन, भाईचारे के संबंध होते हैं। परिवार के लोग रिश्ता रखते भी हैं और निभाते भी हैं। कोई मुँहबोला भाई, बहन का नाता जोडता है तो उसे निभाने का हर तरह से प्रयत्न भी करता है। इस तरह एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति बरती जाती है।

वर्तमान जीवन की दौड-धूप, व्यस्तता, गतिशीलता, यंत्रवत्ता के कारण प्रत्येक शहरवासी को अपनी जिंदगी को ढोना ही दुष्कर कार्य बन गया है, इसमें अगर आर्थिक तंगी हो तो जीना और भी दूभर होता है। जब हर एक को अपनी ही पडी है तो दूसरों का खयाल करने की फूरसत मिलना कठिन है। इसी कारण शहरों में रिश्तों में शिथिलता आ रही है। इसी अवस्था में रिश्ता निभाना मुश्किल हो चुका है। वस्तुत मानव-मानव के बीच बढनेवाली यह दरार एक चिंताजनक बात है।

"आज हमारे संबंधों एवं पारिवारिक रिश्तों पर अर्थतंत्र हावी है। बुआ, चाची, मौसी, मामी, मामा आदि संबंधों की तो बात ही क्या माता-पिता, पिता-पुत्र, भाई-बहन, भाई-भाई आदि निकटवर्ती संबंधों के मूल में भी अर्थ ही महत्त्वपूर्ण है। इसके परिणाम स्वरूप संयुक्त परिवार टूट-टूट कर व्यक्ति परिवार में परिवर्तित हो रहे हैं और व्यक्ति समाजसापेक्ष न होकर केवल आत्मकेंद्रित हो रहे हैं।"[19]

शहरी जीवन में मनुष्य का स्वभाव, आर्थिक तंगी तथा अभावग्रस्तता के कारण परंपरागत रिश्ते-नातों को जताना कठिन होता है। आज के गतिमान युग में उनके पास इतना समय नही है कि अपने

संबंधियों के प्रति आत्मीयता प्रकट करें। शहरी लोग आत्मकेंद्रित हुए हैं। इसी-कारण समाज में रिश्ता जताने की समस्या निर्माण हो गई है।

'अग्निपंखी' में जयशंकर की मॉ त्रिलोकी ठाकुर के साथ रिश्ता बनाए रखने का प्रयत्न करती है। परतु जयशंकर को यह पसंद नहीं है। ठाकुर ने अपने नाती के मुंडन के समय माँ की अच्छी आवभगत की थी। जयशंकर नौकरी की तलाश में बर से गायब रहता है उस समय ठाकुर ही उसका धीरज बॉधते हैं।यह सब जानकर ही मॉ शहर में अपने बेटे के घर में उनकी अच्छी आवभगत करना चाहती है। परंतु बेटे को यह सब उचित नहीं लगता है। उसके पास रूपयों की भी कमी है और रहने के लिए कमरा भी नहीं है। साथ ही जयशंकर का स्वभाव आत्मकेंद्रित होने के कारण उसे माँ के रिश्ता निभाने के इस प्रयास पर क्रोध आता है। जयशंकर को जहॉ अपनी माँ ही बोझ-सी प्रतीत हो रही है तो मॉ द्वारा अन्य आदमियों से बनाए जानेवाले रिश्तों का सम्मान जयशंकर द्वारा होना कठिन है। मॉ उसे अपने गॉव-घर के आदमी के साथ परस्पर संबंध रखने के लिए कहती है, तब जयशकर कहता है, ''नहीं, मुझे किसी से व्योहार नहीं बनाना है, और तुम्हें भी जो व्योहार बनाना हो, गॉव जाकर बनाना।''[20]

मॉ बीमार रहती है तब त्रिलोकी ठाकुर उसे मिलने आते हैं। जयशंकर को यह अच्छा नहीं लगता और वह कहता है, ''डाक्टर ने सक्त मना हियादत दी है कि लोग हर समय जमघट न लगाये रहा करे। इससे दिमाग पर और भी बुरा असर पडेगा।''[21]

आत्मकेंद्रित वृत्ति, आर्थिक तंगी आदि के कारण मनुष्य इस प्रकार के रिश्ते बनाए रखने में हिचकिचाता है कि जिससे अपने को किसी प्रकार की तकलिफ सहन करनी पडे। दूसरों के लिए किसी प्रकार की भी तकलिफ सहन करने के लिए वर्तमान मनुष्य बिल्कुल तैयार नहीं है।

4 3 सामाजिक समस्याएँ -

4 3.1 अर्थाभाव की समस्या -

आर्थिक अभाव मनुष्य को काफी तंग करता है। इस अभाव की पूर्ति के लिए मनुष्य को कई काम करने पडते हैं। जब वेतन अधूरा होता है तब पारिवारिक आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए अन्य छोटे-

मोटे कामों द्वारा पैसा कमाना पडता है। इस प्रकार के काम करते वक्त व्यक्ति के सम्मान को ठेस भी पहुँचती है। अवमान सहना पडता है। पर पैसों के लिए उसे लाचार और मजबूर होना पडता है। 'दीक्षात' उपन्यास में मि शर्मा इसी कारण ही दूसरों के घरों में जाकर ट्यूशन लेने पर मजबूर है।

अर्थाभाव के कारण ही आदमी को अपनी आवश्यकताओं में कटौती करनी पडती है। पेट काटना पडता है। शर्मा जी तो ट्यूशन पर मिली चाय पर ही संतुष्ट हैं। घर पर वे चाय नहीं लेते। इस चाय की बचत द्वारा वे घर की कुछ चीजें खरीदना चाहते हैं। मि शर्मा को अपने बच्चों के लिए किताबें, जूतें खरीदना भी मुश्किल है। किसी विशेष प्रसंग पर बच्चों को अपने दोस्तों से कपडे, जूते मॉगकर पहनने पडते हैं - ''न, अभी कुछ न कहना उसे. और है भी नहीं.. आधे-पौन घंटे हो गए अपने दोस्त माधव के यहाँ काले जूते लेने गया है परेड के लिए, इसके पास है नहीं न .।''[22] मि शर्मा की पत्नी की बच्चे के संदर्भ में कहीं गई इस बात से शर्मा की आर्थिक तंगी स्पष्ट होती है। मि शर्मा के घर कभी-कभी सिर्फ दाल या सब्जी ही खाने में रहती है।

'अग्निपंखी' में अर्थाभाव के कारण ही जयशंकर आत्मकेंद्रित बन गया है। शहर में नौकरी के बाद भी वह अपने लिए कपडे और जूता भी खरीद नहीं सकता। ''तीन महिने से अपने लिए जूता नहीं खरीद पाया। अभी लोकल का पास अलग बनवाना है। महीने के बचे पूरे दस दिन का खर्चापानी .पर इसे कौन समझाए। इसके लिए सबसे जरूरी चंदा की फ्राक ही है। पॉच हजार का बीमा कराया, वह भी कभी टाइम पर किस्त न जमा कर पाया।''[23]

''तुम्हारे पीछे जिंदगी हालकान हो गई। दाने-दाने को मुहताज हो गया, लेकिन तुम यहाँ की बात समझती ही नहीं।''[24]

जयशंकर अर्थाभाव के कारण किसी के साथ रिश्ता जताना नहीं चाहता है। स्वयं आत्मकेंद्रित बन गया है।

''नहीं मुझे किसी से व्योहार नहीं बनाना है और तुम्हें भी जो व्योहार बनाना हो, गॉव जाकर बनाना।''[25]

इस प्रकार पैसा ही सबकुछ बन गया है। समाज में सर्वत्र अर्थतंत्र ही प्रमुख हो गया है, जिस पर रिश्ते बनते भी हैं और बिगडते भी हैं। व्यक्ति-जीवन के असंतुलन का कारण आर्थिक ही है। यह अर्थतंत्र

हमारे संस्कारों और व्यवहारों में भी प्रवेश कर चुका है। पारिवारिक, धार्मिक, राजनीतिक, सामाजिक रिश्ते-नाते टूटते और बनते जाते हैं। अर्थ के कारण ही रिश्ते आत्मकेंद्रित बनते हैं।

4 3.2 बुढापे की समस्या -

माता-पिता अपने बाल-बच्चों को पाल-पोसकर बडा करते हैं। बच्चे जवान होने पर उनके सुखी होने की चिंता भी माता-पिता ही करते हैं। पर नौकरी आदि के कारण समृद्धि प्राप्त किए बेटे की शादी के बाद अपने माता-पिता ही बोझ से प्रतीत होते हैं। बूढे आदमी को संयुक्त परिवार में रहते हुए सभी के ताने सहन करने पडते हैं। बेटा बडा होकर अपना साथ देगा यही इच्छा लेकर बूढे लोग रहते हैं। परंतु बेटे की शादी के बाद उसे अपने माता-पिता बोझ लगते हैं।

'अग्निपंखी' में भी जयशंकर की मॉ बूढ़ी हो गई है। उसकी इच्छा है कि अब वह अपने बेटे-बहू के साथ रहे। उसने अपने बेटे को पढा-लिखाकर नौकरी के लिए काबिल बनाने के लिए काफी कष्ट सहन किए हैं। परंतु जयशंकर मॉ को अपने साथ रखने में संकोच करता है। माँ जब उसके साथ रहेगी तब उसे अपनी झूठी प्रतिष्ठा को बनाए रखना कठिन हो जाएगा, उसकी पोल खुल जाएगी तथा साथ रखने से उसकी बीमारी का खर्चा भी उठाना पडेगा, उसकी देखभाल करनी होगी इसलिए वह अपनी माँ को सँभालना नहीं चाहता है। जयशंकर के सामने मॉ के बुढापे की समस्या है, मॉ का साथ उसे असहनीय लगता है। इसलिए बात-बात पर वह उखाडता है। बीमारी के समय भी वह प्यार से बात करने के बजाय उस पर क्रोध प्रकट करता है।

वर्तमान समाज में बुढापा बोझ बन गया है। माता-पिता अपने बच्चों को बोझ लगते हैं।

4.3 3 झूठी प्रतिष्ठा का लबादा -

प्रतिष्ठा, सम्मान व्यक्ति के लिए प्यारी चीजे हैं। इसलिए कभी-कभी वह इन बातों का मुफ्त में लाभ उठाना चाहता है। शहर में रहनेवाला ग्रामीण आदमी शहर में कीडेनुमा जिंदगी जीता है। पर वह गॉव आने पर स्वयं कोई बडा आदमी होने का ढोंग प्रदर्शित करता है। अपनी असलियत को छिपाकर गॉववालों पर रोब जताने के हेतु झूठी प्रतिष्ठा की चादर ओढता है।

''आज के औद्योगिक-वैज्ञानिक युग में शहरों का भौगोलिक विकास अत्यंत तीव्र गति से होने लगा है। इसमें ये केंद्र नैसर्गिक भाव-भावनाओं की अपेक्षा कृत्रिम और दिखावटी जीवनयापन की ओर अत्यधिक आकृष्ट है। नागरी सभ्यता हार्दिकता की अपेक्षा कृत्रिम संबंधों की ओर बढ़ी है। तड़क-भड़क, बाह्य प्रदर्शन, नकलीपन इस समाज की वृत्तियाँ बनने लगी हैं। शहरी सभ्यता की दिखावटी जीवन पद्धति से देहाती युवक-युवतियाँ अनभिज्ञ होती हैं। अत. उनका पग-पग पर अपमान किया जाता है।''[26]

अग्निपंखी' में झूठी प्रतिष्ठा के दर्शन होते हैं। जयशंकर को शहर में नौकरी मिलती है तब वह सिल्कीन बुशर्ट, पतलून पहनकर आता है। सभी समझते हैं कि अब वह अफसर बन गया है, ऐश कर रहा है, गाँव वापस नहीं आएगा। किंतु वास्तविकता यह है कि आराम की जिंदगी जीना और माँ की बीमारी का इलाज करना भी उसके बस की बात नहीं है। माँ जब बीमार थी। तब जयशंकर माँ को अपने साथ ले जाता है। माँ को गाँव वापस भेजते समय वह माँ को गाँववालों से अपनी असलियत छिपाकर रखने की सूचना देता और माँ की दवाइयों के पैसे बचाकर अपनी बेटी के लिए मिल्कपावुडर लाता है। परंतु वह बाहर के लोगों से अपने घर की दयनीय हालत को छिपाकर रखना चाहता है। यह दयनीयता माँ से संबोधित उसके निम्न व्यक्तव्य से स्पष्ट होती है - ''सारी कोठरी भट्टे की तरह खोलकर नुमाइश लगा रही हो ? शकल देखी है अपनी ? यह फटी लुगरी, धोती बाहर बैठने लायक है ? यही हालत रही, तो कुएँ में कूदकर जान दे दूँगा किसी दिन।''[27]

वर्तमान युग में आदमी उच्चप्रतिष्ठा का नकलीपन लेते अपनी असलियत को छुपाता है।

4.3.4 अंधविश्वास की समस्या -

हमारा समाज सदियों से ईश्वर, व्रत, पूजा-पाठ, भक्ति, भाग्य, तीर्थ, भूत-पिशाच, तंत्र-मंत्र आदि में आस्था रखता आया है। वैसे तो समाज के उच्च और निम्नवर्ग में भी इनमें आस्था रही है। मध्यवर्गीय परिवारों में भी अंधविश्वास दिखाई देता है। आज शिक्षित होने के बावजूद भी मध्यवर्गीय नारी पूरी तरह से अंधविश्वास को छोड नहीं पाई है। अनपढ नारियों में तो अंधविश्वास की कोई सीमा ही नहीं है। गाँवों में यह दिखाई देता है कि अच्छे कपडे पहनने से नजर लगती है। किसी पर मानसिक आघात हो जाने पर वह खामोश हो

जाता है पर लोग समझते हैं कि कोई भूत-पिशाच का प्रभाव है तब भैरों जैसे लोगों के पास जाकर आदमी को पिशाच के प्रभाव से मुक्त करने के भी प्रयत्न किए जाते हैं।

'अग्निपंखी' में जयशंकर अच्छे कपडे पहनकर शहर से लौटता है। उसे देखने में गॉववालों को कुतूहल लगता है। अत गाँव के लोग उसे देखने आते हैं। उस समय माँ कहती है, "दुहाई संकटा माई, भैरोनाथ की लडके को नजर-गुजर से बचाना।"[28]

जब छोटी चंदा दूध नहीं पीती तब मनिहारिन की नजर लग जाने की बात कही जाती है।

नई कोठरी को लेकर परिवार में झगडा हो जाता है, मॉ का मानसिक तनाव बढ जाता है और वह अपना होश-हवास खो बैठती है। वैद्यजी से दवा देने पर थोडी देर बाद होश आता है। परंतु फिर वह अपनी जगह खामोश बैठती है। तो घर के लोग उसे 'ऊपरी जंजाल' कहकर मंत्रविद्या जाननेवाले भैरों को बुलाते हैं।

इस तरह एक ओर नजर लगाना, भूत की बाधा होना जैसे अंधविश्वासों का प्रभाव समाज पर अधिक होने के कारण मनुष्य के शारीरिक एवं मानसिक विकार को अंधविश्वासों के साथ जोडा भी जाता है और दूसरी ओर उन विकारों को नष्ट करने के लिए वैज्ञानिक तरीकों के अलावा तंत्र-मंत्र जैसे अंधविश्वासपूर्ण मार्गो का ही अवलंब किया जाता है। इससे साफ जाहिर है कि भारतीय समाज अंधश्रद्धा से ग्रस्त है।

4.3.5 वैद्यों की मक्कारी -

समाज में वैद्यों की इतनी भरमार है कि हर जगह कई डाक्टर पाए जाते हैं। डाक्टरों को मरीज का इंतजार करना पडता है। जब कोई मरीज जल्दी में किसी डाक्टर के पास लाया जाता है तब वह डाक्टर उसकी पहले आर्थिक लूट करता है। फिर किसी दूसरे डाक्टर के पास भेज देता है, दूसरा तीसरे के पास भेजता है। उसके बाद खून, पेशाब की जॉच करके इलाज किया जाता है। डाक्टर सिर्फ अपना लाभ देखते हैं। अपने पास की दवाइयॉ देने के बजाय पुरजों पर लिखकर दूकानों से दवाइयाँ खरीद लेने की सूचना देते हैं।

'अग्निपंखी' में जयशंकर की माँ बीमार होती है। जयशंकर उसे अस्पताल में ले जाता है। उस समय डाक्टर दूसरे के पास एक्स-रे लेने भेजते हैं। उसके बाद खून, पेशाब, दट्टी की जाँच शुरू होती है। डाक्टर दवा पुरजे पर लिख देते हैं और ऊपर से कहते हैं, "वह तो सब आप बाद में दिमाग के डाक्टरों को

बताइएगा। मैं तो बस बेहोशी और बुखार की दवा दे रहा हूँ। लगातार भीगने से निमोनिया तो होना ही था। बेहोशी दूर होने पर भी बुखार की तेजी में बड़बड़ा सकती है। पर घबराने की कोई बात नहीं। दिमाग के मरीजों को जल्द जान का खतरा नहीं होता।''[29]

डाक्टर लोग मरीजों के रिश्तेदारों से भी ठीक व्यवहार नहीं करते हैं। वे रिश्तेदारों पर चिढते हैं। अलग-अलग बीमारी के डाक्टर होने के कारण मरीज को ठीक होने में देर लगती है। इस तरह हम देखते हैं कि ईमानदारी से मरीजों की सेवा करना और उसका ठीक-ठीक दाम वसूल करने की बात अस्पतालों में दुर्लभ हो चुकी है। डाक्टरों की संख्या में बढौती होने के बावजूद भी अस्पतालो में मरीजों की अर्थिक लूट होती हुई दिखाई देती है।

4.3.6 नगरोन्मुखता के दुष्परिणाम -

आज गॉव टूटकर नगरों में विलीन हो रहे हैं। नगर के आकर्षण के कारण लोग बेतहाशा शहरों की ओर भाग रहे हैं। वर्तमान शिक्षित लोग गाँव को नरक मानकर शहर को स्वर्ग मान रहे हैं। शहरी शिक्षा आकर्षण का केंद्र बन गई है। गॉव के सुविधाप्राप्त लोग नगरों में बसते जा रहे हैं। शहरों में गॉव की अपेक्षा काफी सुविधाएँ उपलब्ध हो रही हैं। एक बार नगर में बसा व्यक्ति दुबारा गॉव लौटना नहीं चाहता है। खेती तथा खेतीहर के प्रति उपेक्षा का भाव दिखाई देता है। बढती आबादी, शिक्षा का विकास, रोजगार के साधन, टूटते सयुक्त परिवार, आकर्षण आदि नगरोन्मुखता को बढावा दे रहे हैं। आज गॉव सभी ओर से टूट रहा है। नई मानसिकता, स्वार्थी वृत्ति, प्रतिष्ठा की लालसा आदि के कारण नैतिक मूल्यों का विघटन हो रहा है।

नगरीय जीवन की बाहरी चकाचौंध और बाह्य आकर्षण; गाँव के लोगों के लिए धरती के स्वर्ग ही लगते हैं। वे अपनी घास-फूस और माटी से बनी झोपडियों से निकलकर ऊँचे महल में रहने के सपने देखते हैं। शिक्षा, नौकरी, व्यवसाय आदि के कारण गॉवों से लोग शहर आते हैं। मुक्त जिंदगी जीने का मोह भी गॉववालों को नगर की ओर खींच लाता है। फलत: बढती आबादी के साथ-साथ दिन-ब-दिन नगरों की अन्य समस्याएँ भी बढ रही हैं। नगरोन्मुखता के निम्न दुष्परिणाम दिखाई देते हैं -

(1) आवास की समस्या -

बढती भीड के परिणामस्वरूप नगरों में आवास की गंभीर समस्या निर्माण हो गई है।

''महानगरों की प्रमुख समस्या आवास से संबद्ध है जहॉ निम्न-मध्यवर्गीय लोग छोटी-छोटी झोपडियों और गंदी बस्तियों में आजीविका तलाशते हुए ऑख मूँद लेते हैं और बडीं-बडी इमारतों में अलग-अलग मंजिलों में रहनेवाले मध्यवर्गीय लोग भी अनेक कठिनाइयों का सामना करते हैं। आवास-समस्या का करूणाजनक स्वरूप वहाँ दृष्टिगत होता है, जहॉ एक छोटे से कमरे में दस-दस पारिवारिक सदस्य रहने को विवश होते हैं।''[30]

नौकरी और पेट-पालन की समस्या हल हो सकती है किंतु आवास मिलना बहुत मुश्किल होता है। आवास मिलता भी है तो किसी अंधेरी चाल, गंदी बस्ती अथवा शहर से दूर मिलता है। आर्थिक स्थिति अच्छी न होने के कारण मकान भी अच्छा नहीं मिलता है। शहर की तुलना में गॉव में मकान की समस्या नहीं है। मकानों के आस-पास खुली जगह भी रहती है। जो आरोग्य की दृष्टि से हितकर होती है जिसका अभाव शहरों में पाया जाता है।

सूर्यबाला ने 'अग्निपंखी' में आवास की समस्या को शहर में उजागर किया है। जयशंकर संयुक्त परिवार का सदस्य है, शहर में नौकरी करता है और एक किराए के कमरे में रहता है। अपनी पत्नी के साथ वह तंग कोठरी में रहता है, यह देखकर उसकी मॉ नाराज हो जाती है। गॉव में बड़े मकान में रहनेवाली मॉ को यहॉ असुविधा होती है। अपने बेटे-बहू के साथ एक कमरे में रहना वह ठीक नहीं समझती है। शहर की भीड-भड्क्के से वह परेशान हो उठती है। अपने एक ऐसे रिश्तेदार के साथ एक कमरे में देर तक बोलते बैठती रहती है, जो बहू के लिए पराया है। अतएव बहू को बाहर जाना पडता है। तब जयशंकर चिढकर कहता है, ''हजार दफे कह दिया, समझा दिया, सहर का कायदा अलग है, गॉव का अलग, पर तुम्हारे मगज में घुमता ही नहीं। सारे दिन तिरलोकी ठाकुर को बुलाकर बिठाए रहीं। अब वह (बहू) कहॉ बैठती, यह भी सोचा ? सामने बैठती, तो बेसरम बना देती.... और अब जलालपुर का कुनबा न्योत रहीं है। कहॉ बिठायेंगे ? अपने सिर पर . ?''[31]

मकान की समस्या इतनी बढ गई है कि एक कमरे का मकान हो तो उसी कमरे में कई लोगों का रहना मुश्किल हो जाता है। इसी कारण संघर्ष होने लगता है। कोई बीमार हो, छोटा बच्चा हो तो और भी समस्याएँ खडी हो जती हैं। इस तरह शहरों में मकान की समस्या गंभीर रूप ले रही है।

(2) मानवीयता का ऱ्हास -

गाँव की तुलना में शहर के लोग अधिकाधिक आत्मकेंद्रित दिखाई देते हैं। अत उनमें मानवता की मात्रा कम दिखाई देती है। नगरों में एक-दूसरे से इतना मन-मिलाप नहीं रखते जितना गॉवों में रखा जाता है। गॉव में लोग एक-दूसरे के साथ मिलजुलकर रहते हैं। शहर में सिर्फ अपने परिवार को लेकर लोग रहते है। शहर का जीवन दौड-धूप का जीवन है। अत· ये व्यस्त लोग सुबह से शाम तक अपना काम और शाम के बाद अपने परिवार में ही मशगूल होते हैं। पडोस में क्या चल रहा है इसकी ओर कोई ध्यान नहीं देते हैं। आज के यांत्रिक युग में मनुष्य भी यंत्रवत बन चुका है। उसके पास समय नहीं है। इसी कारण आज मानवता का ऱ्हास होने लगा है। आज आदमी खून के रिश्तों को भी भूलकर अपने स्वार्थ को देखने लगा है। इसी कारण आज शहर में मानवीयता का ऱ्हास होता हुआ दिखाई देता है।

'अग्निपंखी' उपन्यास में जयशंकर आत्मकेंद्रित बना हुआ है। शहर में रहकर वह रिश्ता बनाए रखना नहीं चाहता। सिर्फ अपनी पत्नी और बच्ची इतना ही संबंध रखता है। गॉव के घर से उसकी आत्मीयता घट गई है। इस तरह मानवीयता का ऱ्हास दिखाई देता है।

निष्कर्ष -

निष्कर्षत हम कह सकते हैं कि सूर्यबाला के उपन्यासों में मध्यवर्ग की समस्याओं का चित्रण सफल रूप में हुआ है। आज शिक्षा जैसा पवित्र क्षेत्र भी भ्रष्टाचार, गुंडागर्दी के माहौल में घिर गया है। अध्यापकों को नौकरी सॅभालने के लिए समाज के सामने दयनीय बनना पडता है। उच्चशिक्षा के बावजूद भी आज नौकरी नहीं मिलती है। इसी कारण उन्हें आर्थिक अभाव की समस्या का सामना करना पडता है। विद्यार्थियों से लेकर सचालकों तक का शैक्षिक माहौल बिगड चुका है, जिसके बीच ईमानदार अध्यापकों को नाहक पीसना पडता है।

मनुष्य जब एक-दूसरे के साथ दीर्घ काल तक एक जैसा ही काम करता रहता है तब किसी न किसी कारणवश परस्पर में अनबनी बनी रहती है। उच्चशिक्षा प्राप्त अध्यापक के प्रति दूसरों के मन में नफरत, द्वेष पैदा होता है। विद्यार्थियों में उनके प्रति गलत धारणा बनाई जाती है। कुछ अध्यापक ऐसा मुखौटा धारण

करते हैं कि विद्यार्थी और अध्यापक के संघर्ष में विद्यार्थियों का साथ देते हैं और सिर्फ झूठी सहानुभूति अध्यापक से जताते हैं।

आज के छात्र गुंडागर्दी, भ्रष्टाचार के माहौल में रहने के कारण अध्यापकों से उद्दंडता से पेश आते हैं। अध्यापकों के साथ भी आवारागर्दी, बेफिक्र से पेश आते है। इस तरह आजकल गलत शिक्षा प्रणाली का प्रचार चल रहा है। आज की शिक्षा संस्थाएँ बडे-बडे अमीरों के हाथ में रहने के कारण शिक्षा का मूल्य कम हो गया है। इसी कारण परीक्षा के समय अमीरों के लडकों को नक्ल करने का मौका दिया जाता है और गुणी, अध्ययनशील छात्रों की हानी होती है।

जिस प्रकार शैक्षिक क्षेत्र में कई समस्याएँ देखने मिलती है उसी प्रकार वर्तमान परिवार तथा समाज का अंतरंग भी कई समस्याओं से ग्रस्त है। आज समाज में मध्यवर्ग में संयुक्त परिवार में झगडे होते दिखाई देते हैं। पारिवारिक जीवन अशांत बन गया है। रिश्ते आत्मकेंद्रित होने से मानवता का ऱ्हास हो रहा है। सिर्फ अपने बारे में ही सोचा जाने लगा है। आर्थिक तंगी के कारण शहरों में व्यक्ति-व्यक्ति के बीच होनेवाले रिश्तों में दरार पडने लगी है।

आज के पूँजीवादी युग में रूपया ही सबकुछ बन गया है, वही इन्सान को सबकुछ सिखा देता है। इसने रिश्ते-नातों को भी प्रभावित किया है। पैसा, जायदाद, जमीन के कारण भाई-भाई में संघर्ष होता है। अर्थ ही महत्वपूर्ण बनने के कारण परिवार में संघर्ष बढ रहा है। आज भाई-भाई के बीच का प्रेम सूखकर सिर्फ अपने बच्चे, पत्नी तक सीमित हो गया है। नौकरी करनेवाले भाई का संपत्ति में कोई हिस्सा नहीं है ऐसा समझा जाता है।

वर्तमान और पुरानी पीढी के विचारों में भिन्नता होने के कारण संघर्ष होता है। सास-बहू के संघर्ष के लिए पीढीगत मान्यताएँ ही जिम्मेदार हैं। सास सोचती है कि बहू अपने विचारों से चले। तो बहू आधुनिक विचारों से चलना चाहती है। विचारों में आनेवाले परिवर्तन के कारण आज समाज में सास-बहू का संघर्ष दिखाई देता है।

मनुष्य समाज में रहता है। तब पारिवारिक समस्याओं के साथ-साथ उसे सामाजिक समस्याओं का भी सामना करना पडता है। समाज में रहते हुए उसे एक-दूसरे के साथ संबंध रखना पडता है।

परतु वर्तमान युग में आर्थिक तंगी, अभावग्रस्तता, मनुष्य का स्वभाव आदि के कारण रिश्ते-नाते जताना कठिन हो रहा है। इसी कारण रिश्ते आत्मकेंद्रित हुए हैं। इसी आत्मकेंद्रित वृत्ति के कारण बुढापा एक बोझ बन गया है। समृद्धि पाने के बाद बूढे लोगों को आज परिवार में स्थान नहीं मिलता। संयुक्त परिवारों का विघटन होने के बाद आज पति, पत्नी और उनके बच्चों तक परिवार सीमित हो चुके हैं। इसी कारण बूढे लोगों को पराया समझा जाने लगा है।

मध्यवर्ग में झूठी प्रतिष्ठा का खोखलापन दिखाई देता है। गॉव का आदमी शहरी चकाचौंध, कृत्रिम और दिखावटी जीवनयापन की ओर अधिक आकृष्ट है। और वह नौकरी की तलाश में शहर चला जाता है। वहॉ जाकर वह शहर की कई समस्याओं का शिकार बनता है। इसमें प्रमुख है निवास-सुविधा। शहर की भीड में नौकरी मिलती है, लेकिन आवास मिलना मुश्किल बन जाता है। गॉव में बडे आवास में सबकी व्यवस्था हो सकती है। परंतु शहर में एक ही कमरे में कई सदस्यों को रहना पडता है। इस तरह शहरी जीवन में रहने के बाद गॉव आकर झूठी प्रतिष्ठा की चादर ओढता है।

समाज में सदियों से ईश्वर, पूजा-पाठ, व्रत, भूत-पिशाच, तंत्र-मंत्र में विश्वास रखते आए हैं। आज भी लोग वैज्ञानिक युग में तंत्र-मंत्र जैसे अंधविश्वासों पर विश्वास रखते हैं। पुरानी रूढि-परंपराओं में समाज जखड गया है। नए विचार, नए ढंग अपनानेवालों को सनातनी लोग नए ढंग से चलने नहीं देते हैं। इसलिए अंधविश्वास आज भी दिखाई देते हैं।

वर्तमान समाज में वैद्यकिय क्षेत्र में भी कुछ समस्याओं के दर्शन होते हैं। जिनमें वैद्यों द्वारा मरीजों की आर्थिक लूट महत्त्वपूर्ण समस्या है। वैद्यों की भरमार होने के कारण उनको मरीजो का इंतजार करना पडता है। जब मरीज आता है तब पहले उसकी आर्थिक लूट करते हैं। डाक्टर ईमानदारी से मरीजों की सेवा करने के बजाय एकतरफ से मरीजों को लूटते हैं, तो दूसरी तरफ उस पर या रिश्तेदारों पर उखडते हैं। वैद्यक क्षेत्र में भ्रष्टाचार आ गया है। इसी कारण आज डाक्टर मरीजों को दवाइयॉ अपने पास की देने के बजाय दूकान में से खरीदने को कहते हैं। इस प्रकार सूर्यबाला के उपन्यास 'दीक्षांत' और 'अग्निपंखी' में शैक्षिक, पारिवारिक और सामाजिक समस्याऍ सफलता से चित्रित हुई हैं।

संदर्भ सूची

1 डा प्रतापनारायण टंडन, हिंदी उपन्यास कला, पृ 347

2 सूर्यबाला, दीक्षांत, पृ 29

3 वही, पृ 90-91

4 वही, पृ 34

5 वही, अग्निपंखी, पृ. 36-37

6 वही, पृ 58-59

7 वही, पृ 30

8 वही, दीक्षांत, पृ 41

9 वही, पृ. 71

10 वही, पृ 93

11 वही, 43

12 वही, अग्निपंखी, पृ 50

13 वही, दीक्षांत, पृ. 56

14 वही, पृ 64

15 वही, पृ 24

16 डॉ साधना अग्रवाल, वर्तमान हिंदी महिला कथा-लेखन और दांपत्य जीवन, पृ. 35

17 सूर्यबाला, अग्निपंखी, पृ 9

18 राम आहुजा, भारतीय सामाजिक व्यवस्था, पृ 30

19 डा राजेंद्र यादव, एक दुनिया सम्मानांतर भूमिका, पृ 42

20 सूर्यबाला, अग्निपंखी, पृ 25

21 वही, पृ 44

22 डा. योगेशकुमारी सुरी, यशपाल के उपन्यास में नारी जीवन की समस्याएँ, पृ 50-51

23 डा. ब्रजमोहन शर्मा, कथालेखिका मन्नू भंडारी, पृ 30

24 सूर्यबाला, अग्निपंखी, पृ 46

25 वही, पृ 215

26 डा टी आर पाटील, सामायिक हिंदी नाटकों में खडित व्यक्तित्व अंकन, पृ 216

27 सूर्यबाला, अग्निपंखी, पृ 58

28 वही, पृ 10

29 वही, पृ. 61

30 डा ब्रजमोहन शर्मा, कथालेखिका मन्नू भंडारी, पृ 100

31 सूर्यबाला, अग्निपंखी, पृ 30